जैन सांस्कृतिक गरिमा का प्रतीक बुन्देलखण्ड

श्री विमलकुमार जैन सोंरया

बुन्देलखण्ड भारत का एक ऐसा भू-भाग है जो मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के लगभग 22 जिलों की सीमा में आता है। भारतीय साहित्य, कला, संगीत, वास्तुकला आदि विविध क्षेत्रों में धर्म एवं संस्कृति की व्यापकता बुन्देलखण्ड में बहुत फलवती हुई है।

सामान्य रूप से इस क्षेत्र ने साहित्य-सेवियों में वाल्मीकि, वेदव्यास, गुणभद्र, भवभूति, मित्रमिश्र, जगनिक, तुलसी, केशव, भूषण, पद्माकर, बिहारी, चन्द्रसखी, ईसुरी, रायप्रवीण, सुभद्राकुमारी, सेठ गोविन्ददास, मैथिलीशरण गुप्त, वृन्दावनलाल वर्मा जैसे शतशः साहित्य-देवताओं को जन्म देने का गौरव प्राप्त किया है—तो शौर्य नक्षत्रों में रणबांकुरे आल्हा-ऊदल, विराटा की पद्मिनी, छत्रसाल, हरदौल, अकलंक, निकलंक, दुर्गावती, रानी लक्ष्मीबाई, चन्द्रशेखर आजाद जैसे सहस्रों वीरों को उत्पन्न करने का गौरव लिए है।

सोनागिर, खजुराहो, देवगढ़, चन्देरी, थूवौन, अजयगढ़, ग्वालियर, पपौरा, नैनागिरि, कुण्डलपुर, पावागिर, मदनपुर, द्रोणगिर, चित्रकूट, ओरछा, कालिंजर, अमरकंटक, सूर्यमंदिर सीरोन आदि स्थापत्य-कला के अद्वितीय कलागढ़ और तीर्थों को अपने अंचल में संजोए बुन्देलखण्ड के शताधिक क्षेत्र आज भी इस भू-भाग की गरिमा को युगों-युगों के थपेड़े खाकर जीवित रखे हैं।

संगीत-सम्राट तानसेन, मृदङ्गाचार्य कुदऊ, विश्वजयी गामा, चित्रकार कालीचरण जैसे अगणित रससिद्ध कलावंत उपजाकर तथा पन्ना की हीरा खदान, भेडाघाट का संगमरमर तथा विन्ध्य शृंखलाओं में सुरक्षित सोना, चांदी, मैगनीज, तांबा, लोहा, अभ्रक आदि खनिज सम्पत्ति के भण्डारों से युक्त आज भी बुन्देलखण्ड भारत की प्रतिष्ठा में अपना स्थान रखे है।

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से आज तक की सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, आचरणिक, व्यावहारिक आदि विविध आयामों की प्रामाणिक जानकारी के लिए बुन्देलखण्ड भारत में गौरव का स्थान प्राप्त किए है। यहां शिल्प कला, संस्कृति, शिक्षा, साहस, शौर्य अध्यात्म का धनी, प्रकृति और खनिज पदार्थों का जीता-जागता गढ़ रहा है।

यहां के जनमानस में सदैव आचरण की गंगा प्रवाहित होती रही है। कला और संस्कृति के अद्वितीय गढ़ यहां की गरिमा के प्रतीक बने हैं। यहां का कंकर-कंकर शंकर की पावन भावना से धन्य है। विश्व में भारत जहां अपनी आध्यात्मिक गरिमा और संस्कृति-सभ्यता में सदैव अग्रणी रहा है; वहां बुन्देलखण्ड भारत के लिए अपनी आध्यात्मिक परम्परा और संस्कृति में इतिहास की महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करने में अग्रसर रहा है। अध्यात्म की प्रधानता हमारे देश की परम्परागत निधि रही है तथा भारतीय संस्कृति में अध्यात्म की मंगल ज्योति सदैव प्रकाशवान रही है। भारत का दर्शन—साहित्य—मूर्तियाँ—भाषाएं—वास्तुकलाएं—शासन व्यवस्थाएं सभी में अध्यात्म की आत्मा प्रवाहित है। धार्मिक भावनाओं को शाश्वत बनाए रखने के लिए ही विपुल परिमाण में मंदिरों और मूर्तियों का निर्माण किया गया है। मंदिरों की रचना और उनमें चित्रित कलाएँ उस युग की सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं की ऐतिहासिक थाती हैं। हमें प्रामाणिक इतिहास की पुष्टि और संस्कृति का स्वरूप इन्हीं प्रतिमानों से उपलब्ध हुआ है।

बुन्देलखण्ड में स्थपतियों, शिल्पियों, कलाकारों एवं कला-प्रेरकों ने अध्यात्म-प्रधान कृतियां निर्मित कीं। उनका झुकाव प्रायः कला की अपेक्षा परिणामों की ओर विशेष रहा है; अतः कलागत विलक्षणता इने-गिने स्थानों में ही देखने को मिलती है। आदिम-युगीन एवं प्रागैतिहासिक काल की संस्कृति का जीता-जागता चित्रण यदि भारत में आज भी जीवन्त है तो उसका केन्द्र बुन्देलखण्ड ही है। उस युग के चित्र व कलाएं आज भी मंदिरों एवं गुफाओं में विद्यमान हैं। यहां के प्रायः जैन मंदिर और मूर्तियां, गढ़, गुफाएं, बीजक पट, शिलालेख आदि इस बात के साक्षी हैं, कि भारतीय परम्पराओं में जन-जीवन, सामाजिक व्यवस्था और धार्मिक परम्परा कहां कब और कितनी फलीभूत एवं पल्लवित हुई है।

ऐतिहासिक दृष्टि से हम आदिम युग से लेकर वर्तमान काल तक भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत श्रमण संस्कृति का पर्यावेक्षण इतिहास-क्रम के आधार पर ६ भागों में विभक्त कर सकते हैं: (१) प्रागैतिहासिक काल—जो ईस्वी पूर्व ६०० से भी पहले माना गया है—में मंदिरों के निर्माण होने के प्रमाण साहित्य में उल्लिखित हैं: (२) मौर्य और शुंगकाल—ईस्वी पूर्व ५००—मंदिरों का प्रचुर मात्रा में निर्माण कार्य हुआ। इस युग की मुद्राओं पर अंकित मंदिरों के चिह्न इस सत्य के साक्षी हैं। विदिशा, बूढ़ी चन्देरी (बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक स्थल हैं) की खुदाई के समय प्राप्त विष्णु मंदिर, पार्श्वनाथ मंदिर, शान्तिनाथ मंदिर के अवशेष ई० पूर्व २००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्ष के हैं। मौर्यकालीन ब्राह्मी लिपि का भी प्रयोग यहां के तीर्थों व शिलापट्टों में देखने को मिलता है। (३) शक-सातवाहनकाल—ईसापूर्व २०० वर्ष तक इस काल की परिगणना की गई है। इस युग में जैन मंदिरों का विपुल मात्रा में निर्माण होना पाया जाता है। इस युग के मंदिरों के अवशेष अनेक प्राचीन स्थलों जैसे सीरोन—मदनपुर—मडखेरा आदि पर आज भी पाए जाते हैं। (४) कुषाणकाल—ईसा की पहली शती से ३ शती तक का काल है। इस युग में मंदिरों के साथ ही राजाओं की प्रतिमाओं का भी निर्माण हुआ है जिन्हें देव-कुल की संज्ञा से अभिव्यक्त किया जाता था। इस काल के मंदिर भारत में मथुरा, अहिक्षेत्र, कम्पलजी, हस्तिनापुर में हैं तथा बुन्देलखण्ड में तो इस युग की प्रतिमाएं अनेक जगह पाई जाती हैं। (5) गुप्तकाल—ईसा की चौथी से छठीं शताब्दी तक का समय है। इस काल में मंदिरों की कला-कृति सुन्दरता के रूप में प्रतिष्ठित हुई। बुन्देलखण्ड के तीर्थों में देवगढ़—चन्देरी - मदनपुर - सीरोन—मडखेरा आदि स्थानों में इस युग के मंदिर पाए गए हैं। द्वार-स्तम्भों की सजावट, तोरण द्वार पर देवमूर्तियों, लघुशिखर एवं सामान्य गर्भ-गृह से युक्त मंदिर इस युग की शैली के प्रतिमान रहे हैं। विशिष्ट प्रकार की मूर्तियों का निर्माण इस युग की विशेषता है जो प्रायः बुन्देलखण्ड के अधिकांश प्राचीन तीर्थस्थलों में मिलती है। (६) गुप्तोत्तरकाल—ईसा की ७वीं शताब्दी से १८वीं शताब्दी तक के समय का इस श्रेणी में समाहार करते हैं। वर्द्धन काल—गुर्जर प्रतिहारकाल—चन्देली शासन काल—मुगलमराठा काल एवं अंग्रेजी शासन काल तक का समय गुप्तोत्तर काल में परिगणित किया गया है। इस युग में मंदिरों के शिखर की साजसज्जा को विशेष महत्त्व दिया गया है। इस काल में चार प्रकार की शैली मुख्य रूप से प्रचलित हुई—(अ) गुर्जर प्रतिहार शैली—इस शैली के अन्तर्गत निर्मित मंदिरों के भीतर गर्भ-गृह और सामने मण्डप बनाया जाता था। कला और स्थापत्य की पर्याप्त संवृद्धि इस समय हुई। प्रायः अधिकांश जैन तीर्थ इसके साक्षीभूत प्रमाण हैं। (ब) कलचुरी शैली—इसमें मंदिरों के बाहरी भागों की साज-सज्जा विशेष रूप से पाई जाती है। मंदिरों के शिखर की ऊंचाई भी बहुत होती है। इस शैली के मंदिरों की बाह्य भित्ति कला अपने आप में अद्वितीय है। खजुराहो तो इस कला का गढ़ ही है। (स) चन्देल शैली—इसमें मंदिरों की शिखर-शैली उत्कृष्ट रूप में प्राप्त हुई है। रतिचित्रों का विकास भी इस शैली के मंदिरों में हुआ है जो मंदिर की बाह्य भित्तियों पर गढ़े गए हैं। इस शैली के मंदिर चन्देरी—खजुराहो—देवगढ़ आदि में पर्याप्त मात्रा में स्थित हैं। (६) कच्छपघात शैली—इस शैली के मंदिर कला के अद्वितीय नमूने हैं। मंदिर के प्रत्येक भाग पर कला की छटा दिखाई पड़ती थी।

काल-विभाजन के इस क्रम में भारतीय संस्कृति के साथ श्रमण संस्कृति और कला का निरन्तर विकास हुआ है। बुन्देलखण्ड के जैनतीर्थों की वास्तुकला के अध्ययन की दृष्टि से कोई ठोस प्रयत्न नहीं हुआ। प्रागैतिहासिक काल से लेकर गुप्तोत्तर काल तक यहाँ की कला में जैन संस्कृति की अविच्छिन्न धारा प्रवाहित होती रही है। भारत में मूर्तिकला की गरिमा बुन्देलखण्ड में देखने को मिलती है। मूर्तिकला के सर्वोत्कृष्ट गढ़ और मूर्ति-निर्माण के केन्द्रस्थल बुन्देलखण्ड में ही विद्यमान हैं। यहां की मूर्तिकला एक-सी नहीं है। भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार की मूर्तिकला के उत्कृष्ट रूप बने हैं। अनेक प्रकार की, आसनों सहित स्वतंत्र तथा विशालकाय, शिलापट्टों पर उकारित मूर्तियां बहुधा इस क्षेत्र में उपलब्ध हैं। कुछ मूर्तियाँ आध्यात्मिक और कुछ मूर्तियां लौकिक दृष्टि से निर्मित हुई हैं। लौकिक दृष्टि से निर्मित मूर्तियाँ कला के बेजोड़ नमूने हैं। उनसे सामाजिक रहन-सहन, आचार-विचार तथा प्रवृत्तियाँ एवं भावनाओं का तलस्पर्शी परिज्ञान होता है। भारत की मूर्ति-कला में बुन्देलखण्ड का योगदान सर्वोत्कृष्ट है। विभिन्न देवी-देवताओं की तुलना में जैन तीर्थंकरों की मूर्तियां बहुत बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। जैन मूर्तियों के चतुर्विंशतिपट्ट, मूर्ति अंकित स्तम्भ एवं सहस्रकूट शिलापट्ट प्रायः इस क्षेत्र में अनेक जगह हैं। देव-देवियों, विद्याधरों, साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाओं, युग्मों, प्रतीकों, पशु-पक्षियों के साथ प्रकृतिचित्रण, आसन और मुद्राएं इस क्षेत्र में कला के अद्वितीय नमूने हैं। इन आयामों से हम कला के विभिन्न विकास-क्रमों का अध्ययन प्राप्त कर सकते हैं। सामाजिक और धार्मिक चेतना के पुञ्ज-रूप इन गढ़ों ने जैन संस्कृति की समुन्नति में बहुत बड़ी भूमिका निभाई है। बुन्देलखण्ड के ऐसे शताधिक पुरातन क्षेत्र हैं जहां वास्तुकला के वर्णित आयामों का स्वरूप-दर्शन हमें मिलता है। बुन्देलखण्ड के इन ऐतिहासिक पुरातन क्षेत्रों में मुख्य हैं देवगढ़, बूढ़ीचन्देरी, खजुराहो, विदिशा, बरुआसागर, मडखेरा, कन्नौज, नौहटा, विर्नका (सागर) पाली, त्रिपुरी, अमरकंटक, सोहागपुर, वानपुर, पचराई, कुण्डलपुर, बालावेहट, बजरंगढ़, पवा, पचराई, डिठला, रखेतरा, आमनचार, गुर्रालकागिरि, चर्णगिरि, नारियलकुण्ड, धूवौन, अहार, पपौरा, चन्देरी, झाँसी संग्रहालय, पावागिर, धावल, मदनपुर, द्रोणगिर, रेसंदीगिर (नैनागिर), सिसई, उर्दमऊ, कोनीजी, नवागठ, पाटनगंज, करगुंवा, सोनागिर, क्षेत्रपाल (जतारा), क्षेत्रपाल (महरौनी), क्षेत्रपाल (ललितपुर), भोंएरा (वंधा), भोंएरा (ललितपुर), ग्यारस पुर, दूधई, चांदपुर, सीरोन (ललितपुर), सीरोन, (मडावारा), गिरार, वडागांव (घसान), सेरोन; काटीतलाई,विलहरी, पठारी, भेडाघाट, त्रिपुरी, ग्वालियर किला, शिवपुरी, आदि। इनसे हमें जैन संस्कृति और कला का व्यापक रूप से अतुल भण्डार देखने को मिला है।

आशा है, पुरातत्व के परिप्रेक्ष्य में भारतीय संस्कृति के अध्ययन की पर्याप्त प्रामाणिक निधि उपर्युक्त स्थलों पर प्राप्त करने के लिए पुरातत्व अन्वेषक अपने पुण्य प्रयास साकार करेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org